मृत्युदंड की प्रासंगिकता

इस Editorial में The Hindu, The Indian Express, Business Line आदि में प्रकाशित लेखों का विश्लेषण किया गया है। इस लेख में मृत्युदंड की प्रासंगिकता और उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है। आवश्यकतानुसार, यथास्थान टीम दृष्टि के इनपुट भी शामिल किये गए हैं।

संदर्भ

समाज की संरचना और तंत्र को सुचारु रूप से क्रियान्वित करने हेतु संस्थागत विधानों का सृजन किया गया जिसमें समाज के सभी वर्गों के हितों के संरक्षण, समाज की अनवरत प्रगति और संस्थाओं के बेहतर निष्पादन जैसे आयामों को एकीकृत किया गया है। संस्थागत विधानों के पारंपरिक स्वरूप में कालक्रम के साथ ही आधुनिक रूप से विकसित और व्यवस्थित संविधान का निर्माण हुआ जिसमे मानव समाज के हितों और अधिकारों को मूल अधिकारों के नाम से संकलित किया गया। समाज की प्रगति जारी रखने हेतु कई प्रकार के संस्थागत और व्यक्तिगत प्रावधान किये गए हैं जिसके परिणामस्वरूप दोनों के मध्य बेहतर तारतम्यता स्थापित की जा सके। समाज की प्रगति और मूल अधिकारों की तारतम्यता के नवीन परिदृश्य के आलोक में मृत्युदंड का विषय वैधानिक पटल पर उभर कर आया है जिसमें सामाजिक व्यवस्थाओं को बनाए रखने और किसी भी मानव के जीवन के अधिकार के मध्य द्वंद की स्थिति बनी हुई है।

मृत्युदंड और भारत

- मृत्युदंड (Capital Punishment) विश्व में किसी भी तरह के दंड कानून के तहत किसी व्यक्ति को दी जाने वाली उच्चतम सज़ा होती है। हालाँकि भारत में मृत्युदंड की सज़ा का इतिहास काफी लंबा है, किंतु हाल के दिनों में इसे खत्म करने को लेकर भी कई आंदोलन किये गए हैं।
- भारतीय दंड संहिता, 1860 में आपराधिक षड्यंत्र, हत्या, राष्ट्र के खिलाफ युद्ध छेड़ने, डकैती जैसे विभिन्न अपराधों के लिये मौत की सज़ा का प्रावधान है। इसके अलावा कई अन्य कानूनों जैसे- गैर-कानूनी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1967 में भी मृत्युदंड का प्रावधान किया गया है।
- भारतीय संविधान के अनुच्छेद-72 में मृत्युदंड के संबंध में क्षमादान का प्रावधान किया गया है। इस अनुच्छेद के तहत भारत के राष्ट्रपति को कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में मृत्युदंड पर रोक लगाने का अधिकार है।
  - इसी प्रकार संविधान का अनुच्छेद-161 राज्य के राज्यपाल को कुछ विशिष्ट मामलों में मृत्युदंड पर रोक लगाने का अधिकार देता है।
- साथ ही यह भी प्रावधान किया गया है कि यदि एक सत्र न्यायालय मृत्युदंड देता है, तो सर्वप्रथम इसकी पुष्टि राज्य विशेष के उच्च न्यायालय द्वारा की जाएगी और उसके पश्चात् ही सज़ा दी जाएगी।
- 2007 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने उन 59 देशों से मौत की सज़ा पर रोक लगाने के लिये आग्रह करते हुए एक प्रस्ताव पारित किया, जो अभी भी इसे बनाए हुए हैं। ज्ञात हो कि भारत इन्हीं देशों में से एक है।

मृत्युदंड का इतिहास

- मृत्युदंड का प्रावधान मानव समाज में आदिम काल से लेकर आज तक उपस्थित है, किंतु इसके पीछे के कारणों और इसके निष्पादन के तरीकों में समय के साथ निरंतर बदलाव आता गया।
- मृत्युदंड का पहला उल्लेख ईसा पूर्व अठारहवीं सदी के हम्मूराबी की विधान संहिता में मिलता है जहाँ 25 प्रकार के अपराधों के लिये मृत्युदंड का प्रावधान था। ईसा पूर्व चौदहवीं सदी की हिट्टाइट संहिता में भी इसका ज़िक्र है।
- सातवीं शताब्दी ई.पू. में एथेंस के ड्रेकोनियन कोड में सभी अपराधों के लिये मृत्युदंड की ही व्यवस्था थी। पाँचवीं सदी के रोमन कानून में भी मृत्युदंड का विधान था।
- प्राचीन भारत में भी मृत्युदंड का प्रावधान उपस्थित था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र का एक पूरा अध्याय उन सभी अपराधों की सूची को समर्पित है जिनके लिये प्राणदंड या मृत्युदंड दिया जाना नियत था। मौर्य सम्राट अशोक ने पशुवध को तो तिरस्कृत किया, परंतु मृत्युदंड पर रोक नहीं लगाई। विदेशी यात्रियों के संस्मरणों से भी प्राचीन भारत में मृत्युदंड की उपस्थिति का पता चलता है।
- आधुनिक विश्व की बात करें तो एमनेस्टी इंटरनेशनल की रिपोर्ट के अनुसार, अब तक 101 देशों ने मृत्युदंड की व्यवस्था पर प्रतिबंध लगा दिया है।
- साथ ही 33 देश ऐसे भी हैं जहाँ पिछले दस वर्षों से एक भी मृत्युदंड नहीं दिया गया है। लेकिन आज भी कुछ देश ऐसे हैं जिनमें मृत्युदंड दिया जाता है। इनमें मुख्यतः चीन, पाकिस्तान, भारत, अमेरिका और इंडोनेशिया शामिल हैं।

क्या मृत्युदंड को समाप्त किया जाना चाहिये?

- यह एक प्रचलित अवधारणा है कि समय के साथ दंड विधान भी अधिक नरम होते जाते हैं और क्रूरतम प्रकृति की सज़ा क्रमशः चलन से बाहर हो जाती है।
    - यह धारणा इस बुनियाद पर टिकी है कि मानव समाज निरंतर सभ्य होता जाता है और एक सभ्य समाज में ऐसा कोई कानून शेष नहीं रहना चाहिये जो उस सभ्यता के अनुकूल न हो। फाँसी की सज़ा को भी इसी कसौटी पर परखा जाता है।
- विश्व के अधिकांश देशों ने अपने संविधान से मृत्युदंड के प्रावधान को समाप्त कर दिया है। विशेषज्ञों का मत है कि भारत को भी मृत्युदंड के प्रावधान को समाप्त कर देना चाहिये, क्योंकि इससे किसी भी उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती है।
- ऐसा कोई भी अध्ययन नहीं है जो यह स्पष्ट करता हो कि अपराध को रोकने में मृत्युदंड आजीवन कारावास की अपेक्षा अधिक कारगर है। अतः मात्र कल्पनाओं के आधार पर मृत्युदंड को अधिक कठोर नहीं माना जा सकता।
- मृत्युदंड की सज़ा सुनाए जाने से लेकर सज़ा दिये जाने तक की एक लंबी अवधि अपराधी के परिवार वालों के लिये भी यातनामय होती है। उनकी इस यातना के लिये कहीं-न-कहीं राज्य ही नैतिक रूप से ज़िम्मेदार होता है।
- एकत्रित आँकड़ों के अनुसार, वर्ष 2000 से वर्ष 2015 के बीच सर्वोच्च न्यायालय ने 60 लोगों को मृत्युदंड की सज़ा दी और बाद में यह स्वीकार भी किया कि उनमें से 15 मामलों (25 प्रतिशत) में गलत निर्णय दिया गया है।

मृत्युदंड को समाप्त करने के प्रयास

- वर्ष 1931 में बिहार से निर्वाचित सदस्य बाबू गया प्रसाद सिंह द्वारा भारतीय दंड संहिता के तहत मृत्युदंड को समाप्त करने के लिये केंद्रीय विधानसभा में एक विधेयक पेश करने का प्रयास किया गया था।
    - सभा में यह प्रस्ताव पारित नहीं हो पाया और उसके एक दिन बाद ही 23 मार्च, 1931 को भगत सिंह, राजगुरु एवं सुखदेव को मृत्युदंड दे दिया गया।
- इसके पश्चात् वर्ष 1931 में ही कराची में अपने सत्र में कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें मृत्युदंड को समाप्त करने की मांग की गई थी।
- वर्ष 1947 और 1949 के बीच संविधान सभा ने मृत्युदंड से संबंधित कई प्रश्नों पर विचार किया। बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर ने सभा में मृत्युदंड की समाप्ति का समर्थन किया था। हालाँकि संविधान सभा ने यह निर्णय न्यायपालिका और संसद पर छोड़ दिया था।

मृत्युदंड के पक्ष में तर्क

- मृत्युदंड के समर्थकों का मानना है कि इसकी संवैधानिकता को न केवल भारत में बल्कि अमेरिका जैसे उदार लोकतांत्रिक देशों में भी बरकरार रखा गया है। अतः सिर्फ यह मानकर मृत्युदंड की आवश्यकता से इनकार कर देना सही नहीं होगा कि कई 'सभ्य' देशों में इसे प्रतिबंधित कर दिया गया है।
- सामान्यतः हत्या जैसे गंभीर अपराधों को रोकने के लिये मृत्युदंड को सर्वश्रेष्ठ और अंतिम विकल्प के रूप में देखा जाता है। ज्ञात हो कि विधि आयोग ने भी अपनी 262वीं रिपोर्ट में मृत्युदंड की सज़ा को खत्म करने की सिफारिश नहीं की थी।
- समर्थक मानते हैं कि हत्या करने वाला व्यक्ति किसी के जीवन जीने का अधिकार छीन लेता है जिसके कारण उसके जीवन का अधिकार भी समाप्त हो जाता है। इस प्रकार मृत्युदंड एक प्रकार का प्रतिकार होता है।
- किसी भी सज़ा के प्रभाव का अंदाज़ा अपराधियों पर उसके असर से नहीं बल्कि आम नागरिकों पर पड़ने वाले उसके असर से लगाया जाना चाहिये।
- इसी से जुड़ा कांट का भी स्वतंत्र संकल्प का सिद्धांत है। इसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति संकल्प स्वतंत्रता से युक्त है एवं वह जानता है कि समाज के पक्ष में वह जिस तरह के निर्णय लेता है, समाज भी उसके संबंध में वैसे ही निर्णय लेता है।
    - इस सिद्धांत में यह बात निहित है कि समाज में हत्या जैसे जघन्य अपराध करने वाला व्यक्ति समाज से भी मृत्युदंड जैसे निर्णय की ही अपेक्षा रख सकता है।
- कई विशेषज्ञों का मानना है कि मृत्युदंड से समाज में यह धारणा पुष्ट होती है कि बुरे के साथ बुरा और अच्छे के साथ अंततः अच्छा ही होता है। तमाम सामाजिक समस्याओं से जूझ रहे समाजों में यह सिद्धांत व्यक्ति को सकारात्मक एवं धैर्यवान बनाता है।

इस संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय के महत्त्वपूर्ण निर्णय

- वर्ष 1980 के बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट तौर पर कहा था कि मृत्युदंड की सज़ा मात्र अन्यान्यतम (The Rarest of The Rare) मामलों में ही दी जा सकती है।
- वर्ष 1983 के मच्छी सिंह बनाम पंजाब राज्य वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने मृत्युदंड के लिये निम्नलिखित मापदंडों को निर्धारित किया:
    - अत्यंत क्रूर, कठोर और भयानक तरीके से हत्या के मामले में;
    - यदि हत्या का उद्देश्य धन प्राप्त करना है;
    - अनुसूचित जाति या अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों की हत्या करने पर;
    - किसी निर्दोष बच्चे, असहाय महिला या गणमान्य व्यक्ति की हत्या करने पर।
- वर्ष 1989 के केहर सिंह बनाम भारत संघ वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि कार्यपालिका की क्षमा शक्ति न्यायिक समीक्षा के अधीन है।

नष्किर्ष

हमें यह समझना होगा कि व्यावहारिक तौर पर ऐसी कोई व्यवस्था निर्मित नहीं की जा सकती जो कि मृत्युदंड से जुड़े सभी नैतिक प्रश्नों का समाधान कर दे। खासकर तौर पर ऐसे देशों में जो गंभीर किस्म के आतंकवाद और हिंसा जैसी समस्याओं से जूझ रहे हों। मौजूदा दौर में यह सहमति बनने लगी है कि यदि मृत्युदंड देना ही हो तो कम-से-कम पीड़ा के साथ दिया जाना चाहिये। इस संदर्भ में कार्बन मोनोऑक्साइड या नाइट्रोजन जैसी गैसों या लेथल इंजेक्शंस के प्रयोग पर विचार किया जा सकता है। अंततः महात्मा गांधी ने कहा है कि 'नफरत अपराधी से नहीं, अपराध से होनी चाहिये'।

प्रश्न: 'नफरत अपराधी से नहीं, अपराध से होनी चाहिये' गांधीजी के इस कथन के संदर्भ में मृत्युदंड का समालोचनात्मक मूल्यांकन कीजिये।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/does-death-penalty-deter-crime